International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 09-11-2025, Accepted: 08-12-2025, Published: 23-12-2025
Volume 11, Issue 4, 2025, Page No. 155-157

शिक्षा में हिन्दी का उपयोग और उसके प्रभाव

डॉ0 अनुराग मिश्रा[1], अविनाश पाण्डेय[2]
[1] शोध निर्देशक, हिन्दी विभाग, का0सु0 साकेत पी0जी0 कालेज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश, भारत
[2] शोध छात्र, हिन्दी विभाग, डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
किसी भी भाषा के लुप्त होने या उसके संकटग्रस्त श्रेणी में आ जाने के परिणाम बहुत दूरगामी होते हैं। भाषा का एक–एक शब्द महत्वपूर्ण होता है। प्रत्येक शब्द अपने पीछे संस्कृति की एक लंबी परंपरा को लेकर चलता है। इसलिए भाषा लुप्त होते ही संस्कृति पर खतरा मंडराने लगता है। संस्कृति और भाषा के संचित ज्ञान को बचाने के लिए भाषा के संरक्षण की बहुत आवश्यकता है। भारत की नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 में इस बात पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा गया है कि दुर्भाग्य से भारतीय भाषाओं को समुचित ध्यान और देखभाल नहीं मिल पायी है, जिसके तहत देश ने विगत 50 वर्षों में 220 भाषाओं को खो दिया है। देश में इन समृद्ध भाषाओं, संस्कृति की अभिव्यक्ति को संरक्षित या उन्हें रिकार्ड करने के लिए कोई ठोस नीति अभी तक नहीं थी। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में सभी भारतीय भाषाओं विशेषकर मातृभाषाओं या स्थानीय भाषाओं को प्राथमिक स्तर पर अनिवार्य शिक्षा का माध्यम और उसके आगे यथासंभव भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाए जाने की बात कही गयी है। भारतीय भाषाओं के संरक्षण के लिए यह एक बहुत बड़ा कदम है। इस कार्य के लिए अनेक अकादमी व संस्थान भी खोले जाने की घोषणा की गयी है। इन नीति में भारत की सभी भाषाओं के साथ संतुलन बनाने की कोशिश की गयी है। इस नीति में यह भी कहा गया है कि दुनियां भर के विकसित देशों में अपनी भाषा, संस्कृति और परंपराओं में शिक्षित होना कोई बाधा नहीं है और इसका भरपूर लाभ उन्हें मिलता है, जबकि भारत में अभी भी यह बहुत मुश्किल कार्य है।

मूल शब्दः हिन्दी भाषा, शिक्षा, छात्र

प्रस्तावना
मातृभाषा में पढ़ाने की अनुशंसा करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 की प्रशंसा करनी होगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति हिन्दी को मजबूत करने में महत्वपूर्ण योगदान देगी। यह बात केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के पूर्व निदेशक प्रो0 नंदकिशोर पाण्डये ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति और हिन्दी का भविष्य विषय पर आयोजित राष्ट्रीय वेबिनार में कही। हिन्दी पखवाड़े के अवसर पर इस वेबिनार का आयोजन माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय की ओर से किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता कुलपति प्रो0 के0जी0 सुरेश ने की। इस अवसर पर मुख्य अतिथि प्रो0 रजनीश शुक्ल और विशिष्ट अतिथि प्रो0 रामदेव भारद्वाज ने भी वेबिनार को संबोधित किया।

भारत का संविधान इस प्रावधान के साथ तैयार किया गया था कि अंतर्राष्ट्रीय अंकों के साथ देव नागरी की लिपि में संघ की आधिकारिक भाषा हिन्दी होगी। (दास गुप्ता 1970, पृ0 136)। हिन्दी के आरोह–अवरोह में सहायता के लिए कई कार्य किए गए। पंद्रह साल की अवधि में अंग्रेजी को चरणबद्ध करने और इसे हिन्दी (1965 तक) से बदलने के लिए एक योजना अपनाई गई थी। भारत सरकार द्वारा वित्त पोषित संघों ने पूरे भारत में हिन्दी को बढ़ावा दिया, जिनमें से सबसे सफल संगठन थे जिन्होंने दक्षिण में हिन्दी निर्देश प्रदान किए। सरकार ने लेखकों, कवियों और अनुवादकों को हिन्दी में काम करने के लिए पैसे भी दिए। समितियों का गठन हिन्दी को 'अधिक विकसित' करने के लिए किया ताकि इसे अधिक व्यापक शब्दावली प्रदान की जा सके जो इसे अपने आधिकारिक कार्यों को पूरा करने की अनुमति देगा। नए शब्दों के लिए प्राथमिक स्रोत संस्कृत था; हालांकि, नई शब्दावली अक्सर अपरिचित थी और औसत व्यक्ति के लिए लंबे समय तक थी और इन शब्दों के बहुमत ने कभी भी पकड़ नहीं लिया। इसके बजाय, अंग्रेजी शब्दों या उनमें से भिन्न का उपयोग अक्सर किया जाता था। भले ही हिन्दी शायद सबसे स्वाभाविक पसंद थी, लेकिन राष्ट्रीय भाषा के रूप में इसकी सफलता प्राप्त करने के लिए कई ब्लॉक थे। इनमें से एक अंग्रेजी की उच्च स्थिति थी–1965 तक इसे सभी सरकारी संचारों से बाहर करने की योजना के बावजूद इसे आज तक बरकरार रखा गया है। अंग्रेजी को प्रतिस्थापित करने की भारतीय भाषा की इच्छा वास्तव में 1920 के दशक से राष्ट्रवादी सोच का हिस्सा थी। (नायर 1969, पृ098) हालाँकि, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अंग्रेजी के महत्व के कारण और जो लोग इसे बोल सकते थे, उन पर दिए गए कई फायदे, अंग्रेजी का अध्ययन पहले की तुलना में और भी अधिक दृढ़ता के साथ जारी रहा, जबकि हिन्दी को कई क्षेत्रों में नुकसान उठाना पड़ा, जहां लोगों को इसकी बहुत कम आवश्यकता थी। इससे यह सुनिश्चित हो गया कि शिक्षित आबादी का एक बड़ा वर्ग जो सरकारी सेवाओं में गया था, को अपनी नौकरी करने में अंग्रेजी का उपयोग करने की आवश्यकता थी। तदनुसार अंग्रेजी ने पूरी तरह से भूमिका को त्यागने के बजाय हिन्दी के साथ एक आधिकारिक भाषा के रूप में अपनी स्थिति को साझा किया है।

शिक्षा
संसार में ज्ञान के समान कुछ भी पवित्र नहीं है। ज्ञान ही मनुष्य की आशंकाओं और जिज्ञासाओं को दूर करता है। इस ज्ञान रूपी दिव्य अलौकिक मार्ग से मनुष्य को पूर्णता की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति में इन सभी बातों का पहले से ही उल्लेख मिलता है। लेकिन जब देश आजाद हुआ और बाहरी आक्रांताओं व अंग्रेजों का राज हुआ तो उन्होंने भारतीय शिक्षा की पद्धति को बदलकर रख दिया। परिणामस्वरूप भारतीय जनमानस अपने विचारों, सभ्यता एवं संस्कृति की जड़ों से कटता चला गया। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति में वह सब कुछ वर्णित है जिससे बालक को न केवल भारत बोध होगा, वरन् वह सच्चा मनुष्य बनकर भारत के लिए पूर्ण रूप से समर्पित होगा। इस पूरी शिक्षा नीति में ज्ञान आधारित सृजनात्मकता व रचनात्मकता के साथ प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्चतर शिक्षा का खाका है। इस नीति में न केवल शिक्षा के ढ़ांचे को आमूल–चूल

बदला गया है, बल्कि शिक्षा पद्धति में सुधार, नवाचार व अनुसंधान के साथ मनुष्य निर्माण में बेहतर योगदान दिया गया है।

सीखना मानव जीवन की एक ऐसी व्यापक प्रक्रिया है जो सतत् एवं जीवन पर्यन्त तक चलती है। मनुष्य जन्म के उपरांत ही सीखना प्रारंभ कर देता है और वह जीवन भर कुछ न कुछ किसी न किसी रूप में सीखता रहता है। धीरे–धीरे वह अपने आप को वातावरण से समायोजित करने का प्रयत्न करता है। भाषा सीखने के लिए वातावरण चाहिए होता है। बच्चा अपने घर, माता–पिता, मित्रमण्डली आदि में वार्तालाप व बोलचाल शुरू करता है लेकिन इसमें भी भाषा सीखने की एक प्रक्रिया रहती है। बच्चा जो वातावरण में सुनता है उसका अनुकरण करके दोहराता भी है। भाषा को औपचारिक तौर पर भी सीखा जाता है ताकि भाषा का ज्ञान समृद्ध हो सके। भाषा शिक्षण में कहीं न कहीं क्रिया पक्ष की विशेषता रहती है। विद्यालय में भाषा शिक्षण भी भाषा अधिगम का औपचारिक तरीका है।

उद्देश्य

- भाषा सीखने एवं सिखाने की दृष्टियों को जान सकेंगे।
- भाषा अर्जन एवं भाषा अधिगम दार्शनिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक आधार को समझ सकेंगे।
- विभिन्न विद्वानों की भाषा सीखने–सिखाने की दृष्टियों को समझ सकेंगे।
- भाषा में शब्द निर्माण एवं संप्रत्यय निर्माण को सीख सकेंगे।
- भारतीय भाषा के विभिन्न दृष्टिकोणों को व्यवहार में ला सकेंगे।

भाषा अर्जन

भाषा अर्जन उस प्रक्रिया को कहते हैं जिसके द्वारा मानव भाषा को ग्रहण करने एवं समझने की क्षमता अर्जित करता है तथा बातचीत करने के लिए शब्दों एवं वाक्यों का प्रयोग करता है। इस तरह जब कोई बालक भाषा अर्जन की इस प्रक्रिया को सीख जाता है तो उसके अंदर मोनव भाषा को ग्रहण करने की क्षमता अर्जित हो जाती है और वह इस तरह अर्जित की गई भाषा को बातचीत करने के लिए शब्दों एवं वाक्यों के माध्यम से आसानी से प्रयोग करता है। भाषा अर्जन एक अवचेतन प्रक्रिया है। इसमें बालक के सीखने की प्रक्रिया व्याकरणीय नियमों से पूर्णतः अनभिज्ञ रहती है और वह प्रथम भाषा अर्जित करता है। भाषा अर्जन की प्रक्रिया में बालक को एक प्राकृतिक संप्रेषण स्रोत की आवश्यकता होती है। इस तरह के माध्यम से वह भाषा सीख लेता है। अर्थात् बालक वातावरण और लोगों के बीच अंतक्रिया के माध्यम से भाषा को अर्जित करता है इसमें बालक सक्रिय भूमिका निभाता है।

भाषा अधिगम का दार्शनिक आधार

भाषा अधिगम एक चेतन प्रक्रिया है। ये प्रक्रिया नियमबद्ध होती है अर्थात् भाषा व्याकरणीय नियमों से सिखाई जाती है। इसमें बालक सीखने की प्रक्रिया से पूरी तरह अनभिज्ञ रहता है। भाषा सीखने के लिए भिन्न–भिन्न विधियों का प्रयोग किया जाता है। इसमें भाषा की लेखन प्रक्रिया पर भी जोर दिया जाता है। इसमें भाषा सिखाने की, भाषा की संरचना, भाषा के नियम, शब्द विज्ञान एवं रूप विज्ञान का भलीभाँति ध्यान रखा जाता है। भाषा को सिखाते समय बच्चे की अर्जित भाषा का सहारा लिया जाता है। इसमें नियमों को बच्चे को स्मरण कराया जाता है।

पाणिनी का महत्वपूर्ण अष्ट अध्याय है, जिसमें कि आठ अध्याय है। अपने कार्य में पाणिनी ने देवों की पवित्र भाषा एवं सम्प्रेषण की भाषा के बीच विभेदीकरण किया और व्याकरण के नियम एवं परिभाषाएँ दी। वाक्य विन्यास संयोजक संज्ञाओं को एक नियमबद्ध तरीके से विश्लेषण एवं व्याख्या करते हुए भाषा के नवीन सिद्धांत दिए। भाषा अधिगम का दार्शनिक आधार एक नियमबद्ध प्रक्रिया होती है। इस आधार में जब बालक को किसी भाषा का ज्ञान दिया जाता है तो भाषा के व्याकरणीय नियमों का प्रयोग किया जाता है। इसमें बालक को भाषा का ज्ञान देने के लिए विभिन्न विधियों का प्रयोग किया जाता है। इसमें भाषा की संरचना, भाषा के नियम, शब्द विज्ञान का एवं रूप विज्ञान का भलीभांति ध्यान रखा जाता है। इस आधार पर जब बालक को ज्ञान दिया जाता है तो बच्चों की अर्जित भाषा का प्रयोग किया जाता है और इस तरह जब बालक भाषा अधिगम के दार्शनिक आधार को पूर्णतः सीख जाता है तब वह उस भाषा को आसानी व शुद्ध तरीके से बोल सकता और समझ सकता है। अगर बालक को पूर्ण रूप से इसका ज्ञान न दिया जाय तो उस बालक को उस भाषा को समझने तथा बोलने में बहुत सारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है।

भाषा अधिगम का सामाजिक आधार

भाषा एक सामाजिक प्रक्रिया है और मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। कोई भी मनुष्य अकेला जीवन नहीं गुजार सकता है और वह एक ही समय में एक या एक से अधिक समाज या सामाजिक समूहों का सदस्य होता है। इसके साथ–साथ वह अपने सामाजिक कार्यों के लिए भाषा पर निर्भर रहता है। सामाजिक रचना एवं समाज में विचार विनिमय की आवश्यकता ने ही भाषा को जन्म दिया है। इसी कारण विभिन्न स्थलों और भिन्न–भिन्न समय में या काल में व्याप्त भाषाओं की भिन्नता पाई जाती है। क्योंकि तत्कालीन समाज में कुछ विशेष ध्वनियों को मान्यताएँ प्रदान की हैं और उसी के आधार पर वस्तुओं का निर्माण किया गया है। उसी के आधार पर समुदाय ने अपनी भाषा ध्वनि शब्द, रूप, वाक्यों आदि का विकास किया है। बालक समाज में रहकर ही उस समाज की भाषा को अर्जित करता है। हर समाज की अपनी एक भाषा होती है और उस पर उस समाज की अमिट छाप मौजूद रहती है अर्थात् भाषा से समाज को और समाज को भाषा से समझा जाता है। इसी कारण समाजशास्त्री भाषा को सामाजिक क्रिया के रूप में देखते हैं। भाषा के माध्यम से ही यह पता चलता है कि अमुक समुदाय के विभिन्न वर्गों के मध्य किस प्रकार की अन्तःक्रिया होती है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक वॉयगोत्सकी ने भाषा एवं समाज के मध्य गहरे रिश्ते की बात की है। भाषा और समाज का संबंध अविछिन्न माना गया है। दोनों अपने अस्तित्व के लिए एक–दूसरे पर निर्भर है। हर भाषा का अपना एक अलग ही समाज होता है जहां वह प्रयुक्त होती है। किसी भी भाषा का उन्नयन समाज द्वारा ही होता है। व्यक्ति समाज के बिना न तो भाषा सीख सकता है और न ही उसको शिक्षित माना जाता है। जैसे समाज अपने अस्तित्व के लिए भाषा पर निर्भर हैं वैसे ही भाषा पूर्णतः समाज सापेक्ष है और यही भाषा और समाज की जीवंतता का आधार है। कोई भी मनुष्य अकेला जीवन नहीं गुजार सकता है। मनुष्य अपनी जरूरतों की पूर्ति के लिए समाज का सहारा लेता है और समाज का सहारा लेने के लिए उसे किसी न किसी भाषा का सहारा अवश्य ही लेना पड़ता है। जब तक वह भाषा का सहारा नहीं लेगा अपनी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकता है। जहां तक भाषा की उत्पत्ति की बात है तो इसकी उत्पत्ति सामाजिक रचना एवं समाज में विचार–विनियम की आवश्यकता ने ही भाषा को जन्म दिया है। इसी कारण भिन्न–भिन्न समाज के अंदर भिन्न–भिन्न तरह की भाषाएं बोली जाती है। यह भाषा समय और काल के तहत बदलती रहती है, क्योंकि समय–समय पर समाज के अंदर कुछ विशेष ध्वनियों की मान्यता होती है और उसी के आधार पर वस्तुओं का निर्माण किया जाता है व उसी आधार पर समुदाय या समाज अपनी भाषा, ध्वनि, शब्दों, रूप, वाक्यों आदि का विकास करता है। जब

तक किसी समाज के द्वारा किसी भाषा को बोला नहीं जाएगा तब तक उस समाज के अंदर उस भाषा का निर्माण नहीं हो पाएगा। अगर किसी भी भाषा का विकास करना है तो उसे समाज के द्वारा अपनाना बहुत जरूरी है। तभी उस भाषा का विकास संभव है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुसार भाषा का संबंध हमारी मानसिक प्रक्रिया से है। किसी उत्तेजना के फलस्वरूप हमारे मन में उत्पन्न प्रतिक्रिया जब ध्वनि की शक्ल लेती है तभी भाषा का जन्म होता है, अर्थात् भाषा एक प्रकार से उत्तेजन प्रतिक्रिया, ध्वन्न प्रक्रिया की ही श्रृंखला है। एक व्यक्ति के मन का प्रत्यय शब्द बिम्ब का रूप ग्रहण करता है। उसके पश्चात् वह शब्द संकेत ध्वनि संकेत के रूप में परिणत होता है। फिर श्रवण के द्वारा ध्वनि संकेत का रूप ग्रहण कर श्रोता के मन में प्रत्यय (संकेत) उत्पन्न करता है। इस प्रकार यह क्रम चकलता रहता है और यही ध्वनि संकेत, वक्ता और श्रोता में सान्निध्य (दूरी या नजदीक) का कारण बनता है। व्यवहारवादियों के अनुसार भाषा का अर्जन एक अनुबंधित प्रक्रिया है, जबकि रचनात्मक मनोवैज्ञानिकों के अनुसार भाषा अर्जन एक वातावरणीय एवं सामाजिक प्रक्रिया है। चौम्सकी मानते हैं कि भाषा अर्जन के लिए मनुष्य में एक अर्न्तनिहित और जन्मजात खाक (ढाँचा) होता है। उसी के कारण मनुष्य भाषा सीख पाता है। संज्ञान परक मनोवैज्ञानिकों ने भाषा अर्जन को मस्तिष्क एवं स्नायुमंडल से जोड़ा है। उपरोक्त मनोवैज्ञानिकों के आधार पर हम कह सकते हैं कि भाषा अर्जन एक सामाजिक एवं वातावरणीय प्रक्रिया है और उसमें मस्तिष्क एवं स्नायुमंडल की अहम भूमिका रहती है।

दार्शनिक दृष्टिकोण

भाषा वह साधन है जिसके द्वारा एक प्राणी दूसरे प्राणी पर अपने भारतीय राजनीति में मुख्य राजनीतिक चिंताओं में से एक भाषा के मुद्दों से जुड़ा है। भारत की स्वतंत्रता के बाद सरकार ने निर्णय लिया कि भारत की आधिकारिक भाषा अंग्रेजी के साथ हिन्दी भी होगी। हिन्दी भाषाओं के इंडो–आर्यन भाषा परिवार से संबंधित है। अन्य भाषाओं के वक्ताओं, विशेष रूप से द्रविड़ भाषाओं ने इस निर्णय में अपनी भाषा और संस्कृतियों को मिटाने का प्रयास देखा। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है कि अंग्रेजी को भारत की आधिकारिक भाषा भी घोषित किया गया था। भारत की आधिकारिक भाषाओं में से एक के रूप में हिन्दी के चयन का कारण राजनीतिक था।

हिन्दी का महत्व

वर्तमान समय में हिन्दी भाषा के नामकरण/शब्द में 250 से अधिक मातृभाषाएँ शामिल हैं, जो एक सांख्यिकीय बहुमत बनाती है। यह देखना आश्चर्यजनक है कि हिन्दी भाषियों का सांख्यिकीय बहुमत कैसे प्राप्त किया जाता है। भाषाई बहुमत बनाने के लिए विभिन्न मातृभाषाओं को मिलाया जाता है। अगर इस तरह की गुत्थम–गुत्था नहीं की गई तो हिन्दी की भाषाई जनसांख्यिकी अलग हो जाएगी। भारतीय भाषाओं के इतिहास में, हिन्दी उन भाषाओं में से एक है, जो कन्नड़, तमिल, तेलुगु, मराठी आदि अन्य भाषाओं के विपरीत, किसी भी राजवंश की आधिकारिक भाषा या प्रशासन की भाषा नहीं थी, आज की आधिकारिक तौर पर पहचानी जाने वाली हिन्दी है। हमने पहले ही देखा कि एक समग्र शब्द रूप को कवर करने के लिए एक छाता शब्द/रूप है, जो अलग–अलग लेकिन संभवतः पारस्परिक रूप से समझदार मातृभाषाओं से बना हैं यह एक सुपर–ऑर्डिनेट शब्द है, जो अधीनस्थ मातृभाषाओं/बोलियों का एक समूह है। इस प्रकार वर्तमान हिन्दी स्वतंत्र भारत के नियोजित विकास का परिणाम है। भाषा के अन्तर्गत आने वाली विभिन्न मातृभाषाओं के बीच मौजूद भाषाई विशेषताओं का सामान्य मूल है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि आधुनिक हिन्दी भाषा का यह रूप है जो उसकी स्वतंत्रता के बाद भारत में लगभग पूर्ण स्वीकार्य रूप में विकसित हुआ है और विभिन्न डोमेन में उपयोग में है। हिन्दी के तीन अलग–अलग रूप विकसित हुए हैं और वे तीन अलग–अलग प्रकार के।

हिन्दी भारतीय हृदय की वाणी है। यह भारत भारती है, जिसमें भारतीय आत्मा मुखरित हो रही है। आंध्र भारती, केरल भारती, तमिल भारती, कन्नड़ भारती आदि भारतीय भाषाओं की वाणी इसमें मुखरित हो यही हमारा दृढ़ संकल्प होना चाहिए। हिन्दीतर भाषाओं की पुस्तकों का अनुवाद लिप्यंतरण सहित हिन्दी में हो तो हिन्दी परिपुष्ट होगी। यह राष्ट्रीय प्रश्न है, भावनात्मक एकता का प्रश्न है। संकल्प शुद्धि का सात्विक परिणाम ही क्रिया सिद्धि है। हमें इस सिद्धि की प्राप्ति के लिए तन–मन, धन से प्रयत्न करना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बर्जर, एम.टी. एशिया के लिए लड़ाईः उपनिवेशवाद से वैश्वीकरण तक, रूटलेज, लंदन और न्यूयॉर्क, 2004
2. बेटेइले आंद्रे, 'समानता और सार्वभौमिकता', आर्थिक और राजनीतिक, वॉल्यूम 36 (38), 2001
3. भारद्वाज, कृष्णा, शास्त्रीय, राजनीतिक अर्थव्यवस्था और आपूर्ति और मांग सिद्धांतों के प्रभुत्व में वृद्धि, मैड्रेस यूनिवर्सिटी प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, भारत, 1966
4. भाटिया, वंदना और विलियम, डी., 'विचार और प्रवचनः कनाडाई और जर्मन स्वास्थ्य प्रणालियों में सुधार और प्रतिरोध', कैनेडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, वॉल्यूम 36 (4), 2003
5. भट्टाचार्य, सब्यसाची शिक्षा और वंचित–19वीं और 20वीं सदी का भारत, ओरिएंट लॉन्गमैन, नई दिल्ली, 2002
6. भट्टी, किरण, 'भारत में शैक्षिक अभाव, क्षेत्रीय जांच का एक सर्वेक्षण', आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक नंबर 27–28, 1998
7. ब्लॉग, एम., 'शैक्षिक योजना के दृष्टिकोण', आर्थिक जर्नल वॉल्यूम 77(306), 1967
8. 'शिक्षा के अर्थशास्त्र की पुस्तक समीक्षाः अनुसंधान और अध्ययन', मानव संसाधन जर्नल वॉल्यूम, 24(2), 1987
9. 'साक्षरता और आर्थिक विकास', स्कूल की समीक्षा, वॉल्यूम 74(4)
10. 'मानव पूंजी सिद्धांत की अनुभवजन्य स्थितिः थोड़ा सा पीलियाग्रस्त सर्वेक्षण', आर्थिक साहित्य जर्नल वॉल्यूम 14(3) 1976